INDEX

NAME : KIRAN COLLEGE : JHANKAR SEC : A Roll No. : 1611229

S. No.	Date	Title	Page No.	Teacher's Remarks/Sign.
1.	9/3/17	आत्म का अर्थ	1	
2.	9/3/17	आत्म पहचान के सिद्धांत	3	Seema
3.	9/3/17	व्यक्तित्व की प्रकृति	5	
4.	22/3/17	व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले घटक	6	Seema
5.	30/3/17	संप्रेषण का संप्रत्यय	8	Seema
6.	30/3/17	संप्रेषण में आने वाली बाधाएँ	10	
7.	30/3/17	योग एवं तनाव प्रबंधन	12	Seema
8.	7/4/17	तनाव की अवधारणा	14	
9.	7/4/17	तनाव प्रबंधन हेतु यौगिक क्रियाएँ	16	Seema
10.	19/4/17	समूह गतिविज्ञान तथा नेतृत्व	20	
11.	19/4/17	समूह के कार्य	21	Seema
12.	25/4/17	सहयोग, प्रतियोगिता, अन्तर्द्वन्द्व	23	Seema

University Roll No. .....

Page No. .....

आत्म का अर्थ

आत्म एक ऐसा आकर्षण केन्द्र बिन्दु है जिसके इर्द - गिर्द अनेक आवश्यकताएँ और लक्ष्य संगठित होते हैं। आत्म दूसरों के संदर्भ में एक मनुष्य के विचारों और कार्यों की चेतना है।

आत्म से अभिप्राय है "स्वयं के प्रति विकास दृष्टिकोण में विकास का परिणाम।"

व्यक्ति स्वयं की पहचान यह करके करता है कि मेरा परिवार, मेरा कार्यालय, मेरा झंडा, मेरी जाति इत्यादि। ये सभी अभिव्यक्ति उसके अहम के दृष्टिकोण को दर्शाती है। व्यक्ति स्वयं के बारे में क्या सोचता है यह आपस में जुड़े अहम के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। आत्म विश्वास प्रक्रिया है जिसमें दूसरे व्यक्तियों के प्रति नए दृष्टिकोण शामिल होते हैं। यह एक विकासात्मक प्रतिकरण है।

क्रैच एवं क्रैच फील्ड → "आत्म वह तरीका है जिससे कोई व्यक्ति स्वयं को देखता है।"

जानसन → आत्म एक ऐसी आन्तरिक वस्तु है जो किसी व्यक्ति ने स्वयं के व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करती है।

आत्म को प्रभावित करने वाले कारक :

अन्त वैयक्तिक संबंध → जब व्यक्ति दूसरे के संपर्क में आकर अन्त: क्रिया करता है

University Roll No. ....

जिसके फलस्वरूप उसके व्यवहार में परिवर्तन होता है। यही लोगों के साथ संपर्क होते हैं जिसके लिए बच्चा अपनी प्रतिक्रिया करता है। इस प्रकार की प्रतिक्रियायें दूसरों के संबंधों पर निर्भर करती है। अर्थात् दूसरे लोग उस व्यक्ति के बारे में क्या सोचते हैं इस प्रकार अन्त: क्रियायें में परिवार स्वरूप बच्चे में आत्म का विकास होता है।

तादात्मीकरण → यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के विचारों और कार्यों को अपने विचार और कार्य के समान मानता है।

अन्त: प्रतिभानरक → जब कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति या पदार्थ में आंशिक या पूर्ण रूप से अपना हिस्सा मानते लगता है तो इस प्रक्रिया में अन्तर्तिभानरक कहते हैं।

भाषा → आत्म के विकास में भाषा की भूमिका महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि विचारों का आदान - प्रदान भाषा के माध्यम से ही होता है आत्म में अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से ही संभव है।

विशिष्ट भूमिका ग्रहण → कई बार बालक विशिष्ट भूमिका ग्रहण करते हैं अर्थात् वे माता - पिता, भाई - बहन, डाक्टर, पुलिस आदि। इस दौरान बच्चे बहुत कुछ सीखते भी हैं यह सभी भूमिकायें बच्चे में आत्म के विकास में सहायक होती है।

सामान्य भूमिका ग्रहण → सामान्य भूमिका ग्रहण में बालक को पूरे समूह के अन्य सदस्यों की भाँति व्यवहार करना पड़ता है। समूह के सदस्य भी हो सकते हैं। कि अन्य लोग उनसे किस प्रकार के व्यवहार की आशा करते हैं। जब कोई बच्चा सहयोगात्मक भूमिका में भाग लेता है तो उसे सामान्य कार्यों के विकास को प्रेरणा मिलती है।

संस्कृति और व्यक्तित्व → संस्कृति व्यक्ति का पथ प्रदर्शन करती है तथा वह व्यक्तित्व के विकास की दिशा प्रदान करती है। अतः संस्कृति व्यक्ति के आत्म को प्रभावित करती है।

आत्म पहचान → अपने आप की पहचान करना आत्म पहचान कहलाता है। जिस-प्रकार हम एक दूसरे का मूल्यांकन करते हैं और उसकी छवि का निर्माण करते हैं। उसी प्रकार हम स्वयं का भी मूल्यांकन करते हैं तथा इस मूल्यांकन के परिणामस्वरूप अपनी ही प्रति एक विशेष धारणा या छवि का निर्माण करता है।

आत्म पहचान के सिद्धान्त

1. सामाजिक तुलना सिद्धांत : व्यक्ति के स्व पहचान का आधार भौतिक वास्तविकता तथा सामाजिक वास्तविकता पर आधारित साधारण तुलना है। कभी व्यक्ति भौतिक वास्तविकता को नयी सामाजिक वास्तविकता के आधार पर अपने व्यवहार

SELF - CONCEPT

- I have healthy body.
- I am an attractive person.
- I am an honest person.
- Religion is my guide in everyday life.
- I am a cheerful person.
- I hate myself.
- I am from a happy family.
- I am not loved by my family.

की दूसरे में व्यवहार से तुलना करता हैं तथा परिणामों के आधार पर कोई व्यक्ति निर्णय लेता हैं या धारणा निर्मित करता है।

2. अवलोकन का सिद्धान्त : किसी भी व्यक्ति को कथनी आन्तरिक स्थितियों का कोई ज्ञान नहीं होता। व्यक्ति इन स्थितियों का कोई ज्ञानी नहीं होता। जब वह इनसे परिचित होता है, वह अपने व्यवहारों के अवलोकन से उनका अनुमान लगाता है। व्यक्ति अपने व्यवहारों में प्रत्यासीकरण के आधार पर अपने अभिप्रेरणा अभिवृत्ति व संवेगों का अनुभव लगा सकता है।

आत्म प्रत्यय: किसी व्यक्ति का आत्म प्रत्यय उसका स्वयं के बारे में ज्ञान होता है। आत्म प्रत्यय एक बहुआयामी विषय है जिसका परिणाम व्यक्ति के स्वयं के बारे में प्रत्यक्ष है। यह आत्म जागरूकता से भिन्न होता है। इसका अर्थ है कि कोई व्यक्ति अपने बारे में किस प्रकार सोचता है या प्रत्यक्षीकरण करता है।

आत्म प्रत्यय के घटक :-

1. आत्म छवि
2. आत्म प्रतिष्ठा
3. आत्म आदर्श

1. आत्म प्रतिष्ठा: आत्म प्रतिष्ठा का संबंध उस सीमा से है जहाँ तक हम स्वयं को स्वीकार करते हैं या हम स्वयं को कितना मूल्य समझते हैं। आत्मप्रतिष्ठा में हमेशा मूल्यां-कन की डिग्री शामिल होती है और हमारे स्वयं के

- Perceived competence (One's feelings of potential for success in meeting specific achievement demands)

Competence (actual success in meeting specific achievement demands)

University Roll No. ..... Page No. 5

बारे में सकारात्मक या नकारात्मक विचार होते हैं।

आत्म प्रतिष्ठा का निर्माण :→ जागरूकता के साथ जीने का अभ्यास बाहरी संसार को ही नहीं समझना बल्कि जो हमारे शरीर के भीतर है उसे भी समझना।

आत्म स्वीकार्यता का अभ्यास इसके अन्तर्गत अपनाने की इच्छा अनुभव तथा हमारे विचारों, भावनाओं और कार्यों का उत्तरदायित्व लेना, बिना किसी इन्कार के या बिना किसी को त्याग कर।

आत्म उत्तरदायित्व का अभ्यास- इसमें ऐसा मानना कि हम अपने पंसदों और क्रियाओं के लेखक हैं, हम अपने दायित्व को समझते हैं।

आलपोर्ट के अनुसार :- व्यक्तित्व व्यक्ति के समस्त जैवकीय आन्तरिक संस्कारों, आवेगों, प्रवृत्तियों, इच्छाओं एवं मूल प्रवृत्तियों एवं अनुभवों द्वारा अर्जित किए गए संस्कारों में है।

व्यक्तित्व की प्रकृति

व्यक्तित्व का अंग्रेजी भाषा के शब्द पर्सनालटी का हिन्दी रूपान्तर है। पर्सनालटी शब्द लैटिन शब्द परसोना से बना है जिसका साधारण अर्थ नाटक में पहना जाने वाला चेहरा होता है। इस रूप में कुछ लोग व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति की बाह्य आकृति से लेते हैं किन्तु यह धारणा उचित नहीं है। व्यक्तित्व के अन्तर्गत "आत्म का प्रदर्शन होता है"। इस रूप में

University Roll No. _____ Page No. 6

आत्मा और व्यक्तित्व का आपस में घनिष्ठ रूप से संबंध है। आत्म के अंतर्गत आत्मविश्वास, आत्म निर्भरता, आत्म संगठन आदि तत्व सम्मिलित हैं।

व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले तत्व :

1. वंश परंपरा 2. पर्यावरण

वंश परंपरा का प्रभाव :→ व्यक्ति के विकास में वंश परंपरा से प्राप्त नलिका विहीनी ग्रंथियाँ हैं जो परंपरा व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास पर प्रभाव डालती हैं।

(i) गल ग्रन्थि (ii) यौन ग्रन्थियाँ
(iii) उपगल ग्रन्थि (iv) तन्त्रिका ग्रन्थि
(v) उपवृक्क ग्रन्थि (vi) शारीरिक रचना एवं स्वास्थ्य।

भौतिक या भौगोलिक पर्यावरण का प्रभाव :→ जिस स्थान की जलवायु ठंडी तथा प्रकृति सुन्दर होती है वहाँ के निवासी सुन्दर, स्वस्थ, परिश्रमी तथा बुद्धिमान होते हैं। इसके विपरीत जहाँ की जलवायु गरम होती है वहाँ के निवासी काले व कम बुद्धि वाले होते हैं।

सामाजिक पर्यावरण का प्रभाव :- व्यक्तित्व के विकास को प्रभावित करने वाले निम्न सामाजिक परिवर्तन कारक हैं -

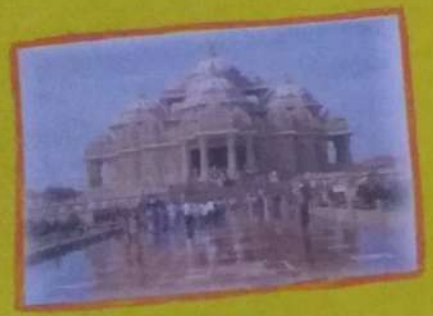

University Roll No. ....

22/3/2017

अभिवावकों का प्रभाव :→ बालक के अभिभावकों का जैसा चरित्र, आदतें व्यवहार तथा भारतीय पारस्परिक संबंध होता है वैसा ही बालक का व्यक्तित्व होता है।

पड़ोसी :→ यदि पड़ोसी अच्छे विचारों के होते हैं तो बालक के व्यक्तित्व में भी अच्छे विचार होते हैं।

परिवार :→ यदि परिवार के संपूर्ण सदस्य चरित्रवान, परिश्रमी होते हैं, झगड़ों से दूर रहने वाले हैं तो बालक के व्यक्तित्व में भी इन गुणों का विकास होता है।

विद्यालय :→ विद्यालय भी बालक के व्यक्तित्व पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। अध्यापकों का बालक के प्रति व्यवहार बालक के मस्तिष्क पर गहन प्रभाव डालता है।

सिनेमा व क्लब :→ बालक के व्यक्तित्व पर क्लब व सिनेमा भी प्रभाव डालते हैं, क्योंकि यह केवल व्यक्ति का मनोरंजन ही नहीं करते बल्कि इनसे शारीरिक व मानसिक विकास भी होता है।

मन्दिर व चर्च :→ बालक किशोरावस्था में मन्दिर व चर्च में जाकर पूजा करता है तथा विभिन्न प्रकार के प्रवचन तथा उपदेश सुनता है, इससे उसके व्यक्तित्व की दशा में विकास होता है।

आर्थिक स्थिति :→ बालक के परिवार की जिस प्रकार की आर्थिक स्थिति होती है, वैसा ही उसका व्यक्तित्व विकास है।

SELF-CONCEPT:

Self-Concept is the act of respecting yourself.

- You must be aware of both your strengths and your weaknesses.
- You must believe in yourself and accept yourself.
- As your self concept increases, there ~~will be~~ less and less that you have to prove to yourself.
- A person with a positive self-concept is pleasant, secure and Content.

University Roll No. ....

Page No. 8

30|3|17

व्यक्तित्व का वर्गीकरण

प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से भिन्न होता है। आधुनिक मनोविज्ञान के आधार पर हम व्यक्तित्व को निम्न तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं:-

1. भाव प्रधान व्यक्तित्व
2. क्रिया प्रधान व्यक्तित्व
3. भाव व क्रिया।

सम्प्रेषण का संप्रत्यय

संप्रेषण शिक्षा की रीढ़ की हड्डी है। बिना सम्प्रेषण के शिक्षा और शिक्षण दोनों की ही कल्पना नहीं की जा सकती हैं। संप्रेषण शब्द अंग्रेजी के Communication का हिन्दी पर्यायवाची शब्द है। संप्रेषण ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति परस्पर सामान्य अवबोध के माध्यम से आदान-प्रदान करने का प्रयास करते हैं।

एन्डरसन के अनुसार :→ संप्रेषण एक गत्यात्मक प्रक्रिया है इसमें व्यक्ति चेतन या अचेतन दूसरों के संज्ञानात्मक ढाँचे को सांकेतिक (हाव-भाव) आदि में उपकरणों या साधनों द्वारा प्रभावित करता है।

एगल डेले :→ संप्रेषण विचारों तथा भावनाओं को परस्पर जानने तथा समझने की प्रक्रिया है।

University Roll No. .....

Page No. 10

शाब्दिक संप्रेषण :→ शाब्दिक संप्रेषण में सदैव भाषा का प्रयोग किया जाता है। यह सम्प्रेषण मौखिक रूप से वाणी द्वारा तथा लिखित रूप में शब्दों तथा संकेतों द्वारा विचार या भावनाओं को दूसरों के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए किया जाता है।

अशाब्दिक संप्रेषण :→ अशाब्दिक संप्रेषण में भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसमें वाणी, संकेत, मुख मुद्रा के प्रयोग एवं स्पर्श संपर्क आदि प्रमुख है।

संप्रेषण में आने वाली बाधाएँ :

कई बार संप्रेषण प्रक्रिया में बाधाएँ आ जाती है, फलस्वरूप प्रेषित या तो गलत हो जाता है या अपूर्ण रूप से ग्रहण किया जाता है।

बाधाओं के प्रकार	बाधाएँ
1. भौतिक बाधाएँ	शोर, अदृश्यता, भौतिक असुविधाएँ।
2. भाषा की बाधाएँ	शब्दाडम्बर होना, गलत उच्चारण, अस्पष्ट प्रक्रिया।
3. मनोवैज्ञानिक बाधाएँ	गलत प्रशिक्षण अनुभव, जरूरत से अधिक चिंता।
4. पृष्ठभूमि की बाधाएँ	पूर्व अधिगम, संस्कृति भेदभाव व।

University Roll No. .....

संप्रेषण में बाधाओं पर विजय :→

एक प्रभावशाली संप्रेषण के लिए उसमें आने वाली बाधाओं पर विजय प्राप्त करने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए।

1. यथासंभव सरल, स्पष्ट, सुगम सुबोध भाषा का प्रयोग करना चाहिए।
2. संदेश इस प्रकार से लिखा जाना चाहिए कि प्राप्तकर्ता उसे आसानी से समझ सके।
3. संदेश में यदि किसी बिन्दु पर विशेष बल देने की जरूरत हो तो आवश्यकता होने पर उसकी पुनरावृत्ति भी जा सकती है।
4. सुनने की अच्छी आदत डालनी चाहिए।
5. प्रतिपुष्टि की सही व्यवस्था की जानी चाहिए।

Locus Of Control ✓

Locus of Control की अवधारणा का विकास जूलियन बी रोटर के द्वारा 1954 में किया गया था। यह एक ऐसी मनोवैज्ञानिक धारणा है कि जिसके अंतर्गत व्यक्ति यह विश्वास करता है किसी परिस्थिति पर कितना अधिक नियंत्रण रखता है। Locus का अर्थ स्थान या स्थिति से होता है।

Locus of Control दो प्रकार का होता है—

1. बाहरी
2. आन्तरिक

University Roll No. .....

बाहरी नियंत्रण के अंतर्गत व्यक्ति यह विश्वास करता है कि उसके निर्णय और जिन्दगी दोनों बाहरी वातावरण के कारण नियंत्रित होते हैं जिन पर व्यक्ति का कोई नियंत्रण नहीं रहता है।

आन्तरिक नियन्त्राण के अंतर्गत व्यक्ति अपनी life को स्वयं नियंत्रित करता है। वह बाहरी हस्त-क्षेप को नहीं मानता है।

शिक्षा के क्षेत्र में इसे विद्यार्थी अपनी शैक्षिक सफलता और असफलता के लिए किसी चीज को जिम्मेदार मानता है। वह परिक्षम, प्रयासों, भाग्य परिस्थितियों को जिम्मेदार मानता है।

योग एवं तनाव प्रबंधन :→

प्रस्तावना : आज के इस आधुनिक विश्व में तनाव एक ऐसा सत्य है जो हम सबसे जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा है। विद्यार्थी व अन्य व्यक्ति भी विभिन्न स्थितियों में तनाव का अनुभव करते हैं।

तनाव शरीर और मन दोनों को प्रभावित करता है। मनुष्य की इस समस्या का सामना करने के लिए अनेक उपाय किए जा रहे हैं। इस संदर्भ में योग को तनाव प्रबंधन के एक महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में स्वीकार किया गया है।

University Roll No. .....

Page No. 13

मनोदैहिक समस्याएँ कैसे उत्पन्न होती हैं?

1. मानसिक चरण।
2. मनोदैहिक चरण।
3. दैहिक चरण।
4. वैकृतिक चरण।

1) मानसिक चरण तनाव के हल्के किन्तु सब मनोवैज्ञानिक लक्षणों जैसे- चिड़चिड़ाहट, खण्डित निद्रा व अन्य छोटे लक्षणों से होता है।

2) मनोदैहिक चरण तनाव है दीर्घावधि तक रहने से आता है। इस चरण में मनोवैज्ञानिक लक्षणों के साथ दैहिक लक्षण रक्तचाप, कपकंपी, दुर्बलता भी जुड़ जाते हैं।

3) दैहिक चरण रोग की अधिक अग्रिम स्थिति है। इस स्थिति में रोग एक दिशा लेता है व अपने लक्षणों से अभिव्यक्त होने लगता है।

4) वैकृतिक चरण रोग की अंतिम स्थिति है। इस स्थिति में रोग संबंधी परिवर्तन के साथ शरीर में अंगों में लक्षण पूरी तरह से व्यक्त होने लगते हैं।

नामकरण

तनाव की अवधारणा

तनाव : एक आधुनिक परिप्रेक्ष्य → तनाव किसी भी एक ऐसी परिस्थिति के प्रति जो कठिन प्रतीत होती है, शरीर की एक सामान्य प्रतिक्रिया है। वस्तुतः हमारे शरीर में विभिन्न मनोवैज्ञानिक तंत्र होते हैं। जो हमारे अस्तित्व के लिए लगातार क्रियाशील रहते हैं। इस उद्देश्य से हमारा मस्तिष्क हमारे बाहरी व आंतरिक परिवेश की लगातार निगरानी करता है। सामान्यतः हमें कठिन परिस्थियों का सामना करना पड़ता है जो हमारे स्वास्थ्य और अस्तित्व के लिए खतरा प्रतीत होती है। तनाव व्यक्ति में किसी कठिन स्थिति का सामना करने वाली मनोदैहिक अनुक्रियाएँ हैं। तनाव कठिन स्थितियों में होता है जिन्हें तनावकारक कहते हैं। तनावकारक स्थिति खतरे की अनुभूति अवबोधन पर निर्भर करती है। तनाव की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि उक्त स्थिति में व्यक्ति कितना खतरा अनुभव करता है। एक ही स्थिति भिन्न-2 व्यक्तियों में तनाव भिन्न मात्रा में उत्पन्न कर सकती है।

तनाव दो प्रकार के होते हैं →

1. यू- स्ट्रेस तनाव 2. डिस्ट्रेस तनाव

यू - स्ट्रेस तनाव का अच्छा और सुखद रूप है। डिस्ट्रेस बुरा या हानिकारक तनाव है जो अप्रत्याशित व

अनियंत्रित कारकों से उत्पन्न होता है।

तनाव के कारण

मनोवैज्ञानिक स्थितियाँ जैसे - कुंठा, विरोध, दबाव, सहन शक्ति की कमी, उच्च आकांक्षाएँ, अवास्तविकता, भावनात्मक संकट आदि भी किसी व्यक्ति में तनाव उत्पन्न कर सकते हैं। भावनात्मक तनावकारक महत्त्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक तनावकारक हैं, निजी जीवन की घटनाएँ जैसे विवाह, तलाक आदि किसी भी मृत्यु, दुर्घटनाएँ, वित्तीय समस्याएँ व्यक्ति के लिए तनावकारक बन सकती हैं।

1. संज्ञान में कमी → व्यक्ति तनाव में खतरे का अनुभव करता है। यह अनुभूति उसके संवेदी आगत स्मरण शक्ति, निर्णय करने की क्षमता को प्रभावित कर सकती है।
2. अनुचित भावनात्मक प्रतिक्रिया → दीर्घकालीन तनाव व्यक्ति की भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ को भी प्रभावित कर सकता है। उसकी भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ ठीक नहीं रहती है।
3. कार्य - क्षमता में कमी → दीर्घकालीन तनाव किसी व्यक्ति की कार्यक्षमता पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। वह व्यक्ति अनेक गलतियाँ कर सकता है।
4. सामाजिक व्यवहार व पारस्परिक संबंधों में समस्याएँ → तनाव के कारण साधारण संबंधों पर भी दुष्प्रभाव पड़ता है। कोई व्यक्ति दूसरों के प्रति चिड़चिड़ापन और शत्रुता का अनुभव करता है।

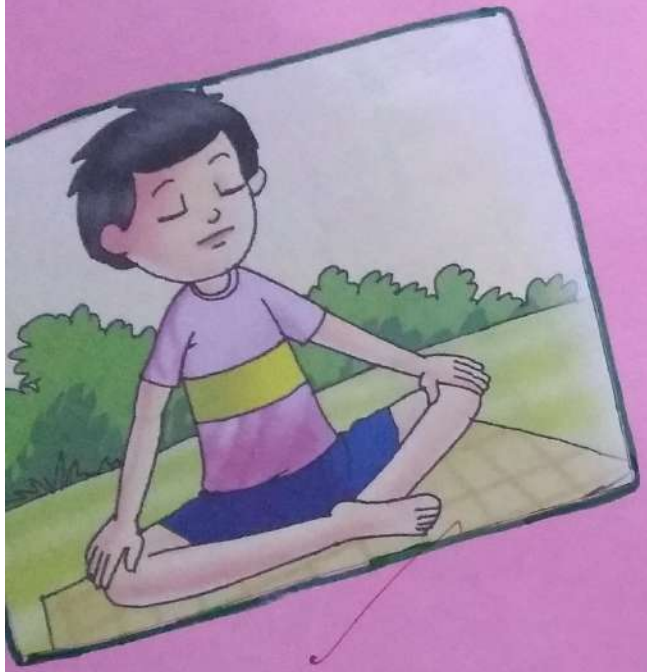

University Roll No. .....

Page No. 16

योग : तनाव का सामना करने की पद्धति

तनाव संबंधी रोगों को रोकने में योग बहुत सहायक हो सकता है। योग को अनेक रूपों में देखा जाता है। कुछ लोग योग को आसनों (शारीरिक मुद्राओं), प्राणायाम (श्वसन तकनीकों) व ध्यान का साधन मानते हैं। कुछ लोग योग को एक ऐसा पाठ्यक्रम मानते हैं जिसमें कुछ शारिरिक व्यायाम निर्धारित हैं व कुछ लोगों के लिए यह एक जीवन पद्धति है। कुछ ऐसे आध्यात्मिक विकास का रास्ता मानते हैं।

योग एक जीवन पद्धति है जो स्वस्थ जीवन के लिए लाभकर, कुछ निश्चित सिद्धांत पर आधारित है। ये सिद्धांत योग की विभिन्न पद्धतियों जैसे- ज्ञान योग, भक्ति योग के दर्शन में पाए जाते हैं।

तनाव प्रबंधन हेतु यौगिक क्रियाएँ

योगनिद्रा : योग निद्रा का अर्थ है सचेतन निद्रा। यह एक यौगिक तकनीक है जो शरीर व मन को विश्राम प्रदान करने के लिए हमें सचेतन निद्रा की अवस्था में ले जाती है। योग निद्रा की प्रक्रिया में शरीर - बोध, श्वासबोध, कल्पना व दृश्यीकरण निहित होता है।

योगनिद्रा तनाव कम करने में सहायक है।

आसन :→ आसन शरीर व मन के लिए अच्छे हैं। तनाव के समय हमारे शरीर की अंतः स्त्रावी प्रणाली पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। इस उद्देश्य से सर्वाधिक प्रभावी आसन पद्मासन, त्रिकोणासन, सर्वागासन, भुजगासन।

प्राणायाम :→ प्राणायाम एक श्वसन अभ्यास है। जिससे प्राणों को नियंत्रित व नियमित किया जाता है। यह शरीर व मन दोनों पर प्रभाव डालती है। यह शरीर के परानुकंपी व संवेदी स्नायुतंत्र के बीच संतुलन बनाने में सहायक होता है। भावनात्मक नियंत्रण लाता है व मन को शांत करता। प्राणायाम के तीन चरण होते हैं :→

1. पूरक (नियमित श्वास करना)
2. रेचक (नियमित श्वास छोड़ना)
3. कुनक (श्वास को नियंत्रित करके रोकना)

प्राणायाम के अनेक प्रकार हैं किन्तु नाड़ी शोधन प्राणायाम व भ्रामरी प्राणायाम तनाव प्रबंधन में प्रभावी माने गए हैं।

अंतर्मौन :→ अन्तर्मौन भी विश्रांति की एक यौगिक तकनीक है। यह आंतरिक शान्ति बनाए रखता है। अंतर्मौन व्यक्ति को बाह्य जगत से दूर आंतरिक जगत में ले जाता है व शरीर एवं मन को शांति प्रदान करता है।

ध्यान :- ध्यान में हम अपने ध्यान को विभिन्न सांसारिक वस्तुओं व विचारों से खींचकर कुछ समय के लिए एक वस्तु या विचार पर केंद्रित करते हैं। ध्यान का अभ्यास सुखद एवं विश्रामदायक बैठने की मुद्रा में किया जाता है।

ध्यान के समय हमारी हृदयगति व श्वासगति व श्वास धीमी हो जाती है। रक्तचाप व अन्तः स्त्रावी स्त्राव सामान्य हो जाता है।

तनाव प्रबंधन हेतु चक्रीय ध्यान :-

सामान्यतः मानव के संपूर्ण शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भावनात्मक व आध्यात्मिक विकास के लिए योग एक व्यवस्थित व सुविचारित प्रक्रिया है। योग तकनीक मनुष्य की बुद्धि मापना, इच्छा शक्ति, व ग्रहणशील संचालन तंत्र के माध्यम से उनकी क्षमता की गतिशीलता होती है।

तनाव कम करने की विधियाँ :-

तनाव कम करने के लिए दो प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जा सकता है- प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष। इन विधियों के विषय में गेट्स ने लिखा है - 'तनाव कम करने की ये विधियाँ व्यक्ति को अपने वातावरण से बहुत समय तक समायोजन करने या न करने के लिए उपयुक्त हो सकती हैं।

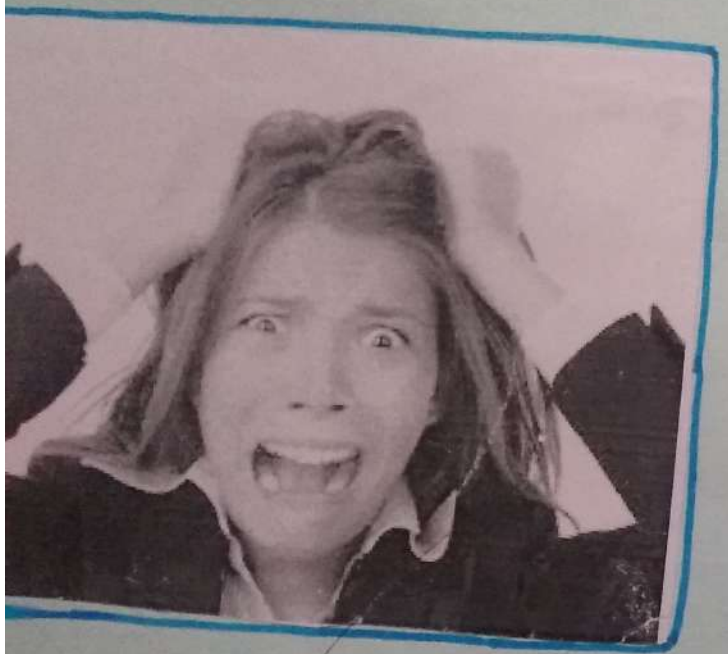

University Roll No. .....

Page No. 19

तनाव कम करने की प्रत्यक्ष विधियां :

1. बाधा का विनाश या निवारण : इस विधि में उस बाधा का विनाश या निवारण करता है जो उसे उद्देश्य को प्राप्त करने देती है।
2. अन्य उपाय की खोज : जब व्यक्ति बाधा का नियंत्रण पाता है तब यह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अन्य उपाय की खोज करता है।
3. अन्य लक्ष्यों का प्रतिस्थापन : जब व्यक्ति अपने मौलिक को प्राप्त करने में असफल होता है तब वह किसी अन्य लक्ष्य का निर्माण करता है।
4. व्याख्या व निर्णय : जब व्यक्ति के समक्ष विरोधी लक्ष्य या इच्छाएं होती हैं तब उसे अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर उन पर विचार करता है। अन्त में प्रश्न उपस्थित कर चुनाव करने का निर्णय करता है।

तनाव कम करने की अप्रत्यक्ष विधियाँ

1. पृथक्करण : इस विधि में व्यक्ति स्वयं को तनाव उत्पन्न करने वाली स्थिति से पृथक् करता है।
2. प्रत्यावर्तन : इस विधि में व्यक्ति अपने तनाव को कम करने के लिए वैसा ही व्यवहार करता है। जैसा वह पहले कभी करता था।
3. दिवास्वप्न : इस विधि में व्यक्ति कल्पना जगत में विचरण करके अपने तनाव को कम करता है।
4. दमन : इस विधि में व्यक्ति तनाव को कम करने के लिए अपनी इच्छाओं का दमन करता है।

समूह गतिविज्ञान तथा नेतृत्व

समाज

व्यक्ति समाज में उत्पन्न होता है। समाज में उसका विश्वास विकास होता है। समाज की क्रिया-प्रतिक्रिया के मध्य वह स्वयं को समायोजित करता है। व्यक्ति समाज को प्रभावित करता है तथा समाज द्वारा निरंतर विकसित होता है। समाज और व्यक्ति को बीच अन्तः क्रिया चलती रहती है। किसी समाज में अनेक समूह होते हैं। समाज में पर्यावरण एकीकरण एवं विभेदीकरण की प्रक्रियाएँ बराबर चलती रहती हैं। वास्तव में समाज व्यक्तियों का संगठित समूह है जिसकी क्रियाएँ लक्ष्य की ओर केन्द्रित होती है, जो समान विश्वास, अभिवृत्तियों एवं कार्य पद्धति रखते हैं।

समूह : समूह समाज का एक अंग है। समूह मनुष्यों का वह संगठन है जिसमें आपसी संबंधों के माध्यम से कतिपय आवश्यकताओं को संतुष्ट करते हैं। व्यक्तियों का वह दल जो अपनी आवश्यकताओं को चेतन रूप में व्यक्त करता है। एवं यान्त्रिक रूप अस्तित्व बनाए रखता है।

समूह - संरचना

समूह रचना मानव आवश्यकता पर निर्भर करती है। मानव की आवश्यकताएँ प्रमुख व गौण होती हैं। इसी प्रकार समूह भी दो प्रकार के होते हैं।

समूहों का वर्गीकरण :
1. प्राथमिक एवं द्वितीयक समूह
2. स्थिर एवं अस्थिर समूह
3. संगठित एवं असंगठित समूह
4. आकस्मिक एवं उद्देश्य समूह
5. अन्तः एवं बाह्य समूह

समूह के कार्य

1. आवश्यकताओं की असमान संतुष्टि : समूह चाहे ऐच्छिक, अनिवार्य अथवा द्वितीयक हो, कुछ सदस्य ऐसे प्रभावशाली होते हैं, प्रायः अधिक प्रभाव सदस्यों की आवश्यकताें की पूर्ति शीघ्र होती है।
2. शक्ति एवं संबंध आवश्यकता : प्रत्येक समूह का मुख्य काम कुछ सदस्यों की शक्ति आवश्यकता एवं अधिकतर सदस्यों की संबंध आवश्यकता की पूर्ति करना है।
3. नयी आवश्यकताें की उत्पत्ति : व्यक्ति की आवश्यकताएँ स्थिर नहीं हैं बल्कि आयु एवं अनुभव में वृद्धि के साथ-2 उनमें भी वृद्धि होती है।

समूह की गतिशीलता

समूह की एक विशेषता यह होती है कि आवश्यकता पड़ने पर इनकी संरचना, लक्ष्यों एवं कार्यों में परिवर्तन हो सकता है। कुछ समूह लंबी अवधि तक अपना स्वरूप एक सा बनाए रखते हैं। परिवर्तन के कारण समूह पुनः संगठित होकर अधिक स्थायी बन सकते हैं।

सहयोग : सहयोग भी समाज एवं सभ्यता की उन्नति में योगदान देता है। सहयोग साधारण जीवन का मूल आधार है और बालकों की आवश्यकताओं और समस्याओं को समझने की आवश्यकताएँ तभी पूर्ण होती हैं जब वे एक- दूसरे का सहयोग करते हैं।
सहयोग से परस्पर प्रेम व एकता जैसे गुणों का विकास होता है। सहयोग से सीखने की प्रक्रिया भी सरल हो जाती है।

प्रतियोगिता : व्यक्ति का जीवन में ऐसी बहुत सी परिस्थितियाँ आती हैं जब उसे दूसरे व्यक्तियों की प्रतियोगिता का सामना करना पड़ता है। प्रतियोगिता के कारण हम बहुत से अरुचिपूर्ण कार्यों में भी भाग लेते हैं और उनमें सफलता प्राप्ति के लिए तत्पर रहते हैं।

अन्तर्द्वन्द : के. लेविन के अनुसार— अन्तर्द्वन्द्व व्यक्ति की वह अवस्था है जिसमें विरोधी और समान शक्ति वाली प्रेरणाएँ एक ही समय में कार्यरत होती है।

सी. एफ. हेनर तथा पी. ए. ब्राउन के अनुसार — व्यक्ति के सामने प्रस्तुत उद्दीप्तीकरण का कोई भी प्रतिमान जिसमें दो या दो से अधिक विरोधी प्रत्युत्तरों को उत्पन्न करने की शक्ति होती है। इन विरोधी प्रत्युत्तरों की शक्ति प्रकार्यात्मक रूप में संलग्न समान होती है।

25/4/2017

अन्तर्द्वन्द्व के प्रकार : लेविन के अपने प्रयोगात्मक अध्ययनों के आधार पर तीन प्रकार की अन्तर्द्वन्द्व परिस्थितियों का वर्णन किया है।

1. ग्राह्य- ग्राह्य अन्तर्द्वन्द्व : इस प्रकार का अन्तर्द्वन्द्व व्यक्ति में उस समय उपस्थित होता है तब उसके सामने दो समान धनात्मक आकर्षण वाली प्रेरणाएँ उपस्थित होती है। और व्यक्ति दोनों के प्रति प्रतिक्रिया करना चाहता है।

Marriage + ← P → Examinations

2. परिहार - परिहार अंतर्द्वन्द्व : इस प्रकार का अन्तर्द्वन्द्व व्यक्ति में उस समय उपस्थित होता है जब उसके सामने दो ऋणात्मक विकर्षण वाले उद्दीपक उपस्थित होते हैं। व्यक्ति दोनों से ही बचना चाहता है।

Don't want to run away → P ← Don't want to kill

3. ग्राह्य- परिहार अंतर्द्वन्द्व : इस प्रकार का अन्तर्द्वन्द्व व्यक्ति में उस समय उपस्थित होता है जब उसके सामने एक धनात्मक और एक ऋणात्मक उद्दीपक उपस्थिति होते हैं। व्यक्ति एक लक्ष्य को प्राप्त भी करना चाहता है परन्तु लक्ष्य प्राप्ति के परिणामों से उसे डर भी लगता है तथा एक को चुनने पर उसके गंभीर परिणाम भी उसे परेशान करते हैं।

→ + Marriage want
← - Marriage don't want

University Roll No. .....

Page No. 25

अन्तर्द्वन्द्व से बचाव :

अंतर्द्वन्द्व का समाधान करने के कई उपाय हैं।

1> प्रथम यह है कि जिन व्यक्तियों की अभिवृत्ति समाधान वाली होती है उनमें अन्तर्द्वन्द्व अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा कम होता है। यदि किसी व्यक्ति में अन्तर्द्वन्द्व उत्पन्न होता है तो उसे इसका सामना करने के लिए प्रयास में Problem solving Attitude अपनाना चाहिए।

2> द्वितीय जब किसी व्यक्ति में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो तो उसे तुरन्त ही इस परिस्थिति पर विचार तथा तर्क - वितर्क प्रारंभ कर देना चाहिए तथा निर्णय कर लेना चाहिए।

3> इन परिस्थितियों के संबंध में जो भी निर्णय लें वे निर्णयों को दृढ़ता से पालना करना चाहिए, अन्यथा ये परिस्थितियाँ पुनः उत्पन्न हो जाती हैं।

4> क्षतिपूर्ति प्रतिक्रियाओं मनोरंजन, रचनाओं द्वारा भी अन्तर्द्वन्द्व की परिस्थिति का समाधान होता है।